हिंदी साहित्य और गाँधीवाद

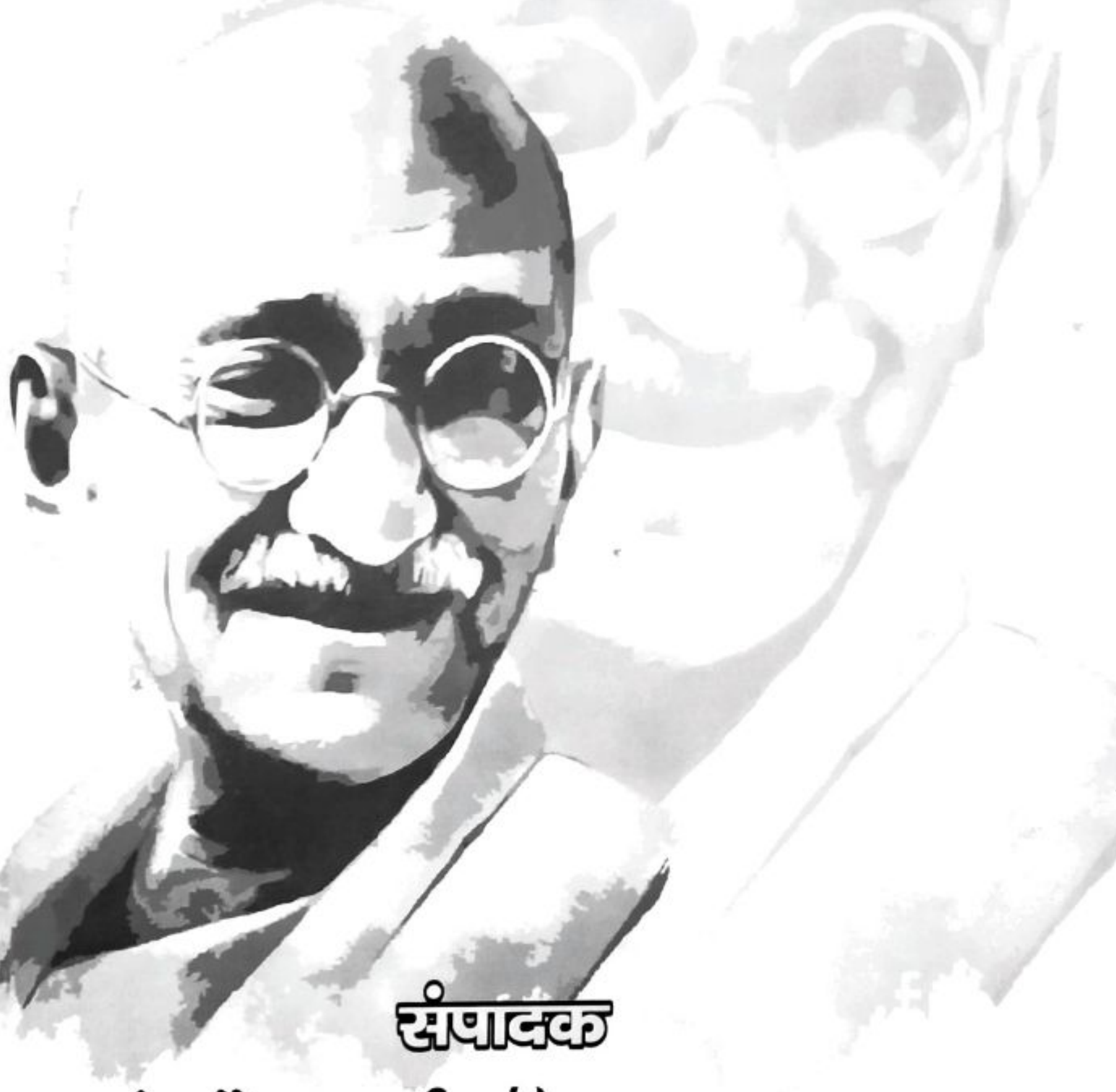

संपादक

प्रो. शैल शर्मा, डॉ. मधुलता बारा

डॉ. गिरजा शंकर गौतम

Scanned with CamScanner

हिंदी साहित्य और गाँधीवाद

संपादक
प्रो. शैल शर्मा
डॉ. मधुलता बारा
डॉ. गिरजा शंकर गौतम

ABS
ए.बी.एस. पब्लिकेशन
वाराणसी-07

Scanned with CamScanner

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो. केशरी लाल वर्मा

कुलपति

पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर

Scanned with CamScanner

32

हिंदी सिनेमा और गाँधी (फिल्म 'लगे रहो मुन्ना भाई')

– डॉ. श्रद्धा चन्द्राकर

जिसे हम हिंदी सिनेमा कहते हैं, वस्तुतः हिंदुस्तानी सिनेमा है जो समूचे हिंदुस्तान और जहाँ–जहाँ हिंदुस्तानी मूल के लोग निवास करते हैं, उनको भावनात्मक रूप से एकसूत्र में जोड़ने का काम करता है। हिंदी भाषा जितनी सुगमता से फिल्मों के गानों के माध्यम से विभिन्न भाषाभाषियों के बीच पहचानी गई, उतनी अन्य किसी माध्यम से नहीं। इसकी निर्मिति में हिंदी भाषाभाषी लोगों के साथ–साथ पंजाबी, बंगाली, गुजराती, मराठी, उर्दू, दक्षिण भारतीय भाषाएँ एवं बोलियों का महत्वपूर्ण योगदान है। हिंदी सिनेमा की भाषा और सांस्कृतिक संरचना को पंचमेल भी कहा जा सकता है। इसमें हिंदुस्तान भर में बोले जाने वाले शब्द व आचार–व्यवहार का समन्वय देखने को मिलता हैं। यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि हिंदी सिनेमा ने भारतीय संस्कृति के मूलमंत्र में अनेकता में एकता को सही अर्थों में प्रस्तुत किया है।

ऐसा भी समय था जब सिनेमा नहीं देखने की माता–पिता की सख्त हिदायत होती थी। 'खबरदार ! सिनेमा देखने गए तो !' पिताजी का निर्णायक वाक्य आज भी याद है।

देखते–देखते सामाजिक जिंदगी में सिनेमा की उपस्थिति अनिवार्य हो गई है, छोटे पर्दे की पहुँच गाँव–गाँव तक है। फिल्मी सितारों का नाम बच्चों की जुबान पर है। जनमानस को इस कला रूप ने जितने गहरे स्पर्श किया है उतना और किसी माध्यम ने नहीं किया है। कला परंपरा में यह दृश्य–काव्य का विकसित रूप तो है ही साथ में विज्ञान की मदद से इसने चतुर्दिक विस्तार किया है। इस कला रूप में चित्र, संगीत, नृत्य रंगकर्म, काव्य इत्यादि का कला संगम है। देशकाल को लाँघने की शक्ति है !

पहले फिल्मों का सुखांत होना जरूरी था अब सुख–दुख का प्रयोजन नहीं करना पड़ता। फिल्म की चिंता यथार्थ में गोते लगाने की होती है। अब तो फिल्म को उद्योग का दर्जा मिल गया है। लोकप्रिय सिनेमा के लिए पूँजी–खेल भी महत्व रखने लगा है। तत्काल का

Scanned with CamScanner

जमाना है। फिल्मों की सफलता पच्चीस – पच्चास–सौ सप्ताह चलने के आंकड़े से नहीं आंकी जाती। पहले तीन दिन की ओपनिंग वीक एंड की कमाई ही बड़े–बड़े सुपरस्टारों को सुपरहिट बनाने में कामयाब हो जाती है। अब सिनेमा 'फिकरनॉट' दर्शकों के मनोरंजनार्थ प्रस्तुत उपक्रम है।

लेकिन सिनेमा वह रचनात्मक विद्या है जिसके सृजन में जीवन के लगभग हर कार्य–व्यापार से संबंधित व्यक्ति जुड़ा होता है।

सिनेमा ने कालजयी कृतियों व महान् व्यक्तित्व को करोड़ों दर्शकों तक पहुँचाने का कार्य किया। इससे भारतीय साहित्य और सिनेमा का कद ऊँचा हुआ है।

यह वर्ष गाँधी की जयंती का 150 वाँ वर्ष है। सिनेमा गाँधी को लेकर भी बनाई गई। इस गाँधीवाद से संबंधित फिल्मों को कई कोणों से देखा व विचार किया गया।

'लगे रहो मुन्ना भाई' फिल्म गाँधी को अवतार के रूप में प्रस्तुत करने वाली पहली फिल्म है। जो व्यक्ति गाँधी जी की किताबें पढ़ने लगता है गाँधी जी उसके सामने आकर बतियाने लगते हैं। और वह प्रेमिका को कैसे विश्वास में ले, उपाय बताने लगते हैं। वैचारिक दृष्टि से देखें तो फिल्मकार गाँधीवाद को तोड़–मरोड़कर गाँधीगिरी में बदलने का काम करते है।

महात्मा गाँधी की लड़ाई हर तरह के शोषण, गैरबराबरी, अमानवीयता और सामाज्यवादी व्यवस्था के खिलाफ थी। वे शोषण मुक्त समाज की स्थापना की कल्पना को साकार करना चाहते थे। गाँधी व गाँधीवादी विचारधारा को कई बार व्यावसायिक हित में इस्तेमाल कर बहुराष्ट्रीय कंपनियों के द्वारा अपने विज्ञापनों में गाँधी का इस्तेमाल किया गया। ऐसे में 'लगे रहो मुन्ना भाई' के माध्यम से गाँधी का वैचारिक रूप से फिर उठ खड़ा होना नए अर्थ खोलता है।

राममुरारी का कथन है वे 'लगे रहो मुन्ना भाई' सिनेमा के एक दृश्य को लेकर विचार प्रकट करते हैं – "फिल्म के एक दृश्य में नायक मुन्ना गाँधी के प्रभाव में आकर प्रापर्टी डीलर लक्खी द्वारा दिए जा रहे निजी हित के तमाम प्रलोभनों को दरकिनार करते और व्यक्तिगत सुख–सुविधाओं को ठोकर मारते हुए जब असहाय और अपने घर–परिवार

Scanned with CamScanner

से बेदखल बुजुर्गों के पक्ष में खड़ा हो जाता है। तो उसका यह खड़ा होना लक्खी के बहाने बाजार के विरोध में भी खड़ा होना है। आखिर बाजार भी तो लक्खी की तरह लालच और प्रलोभनों के द्वारा लोगों को अपने मकड़जाल में जकड़ता जाता है। यह बाजार ही आज साम्राज्यवादियों का सबसे बड़ा हथियार है। फिल्म लगे रहो मुन्ना भाई इस बाजार का प्रतिरोध रचती है।"[1]

आज गाँधी दिवस में याद किए जाते है वे 2 अक्टूबर या 30 जनवरी को याद किए जाते हैं। उनके तस्वीर के सामने बैठकर दो मिनट का मौन और 'रघुपति राघव राजा राम' गीत गा लिया जाता है। जो अपने को गाँधी के अनुयायी बताते हैं वे उनकी आड़ में राजनैतिक, व्यक्तिगत रोटियाँ सेकते हैं। कई बार यह महसूस होता है कि सिनेमा के माध्यम से गाँधी, गाँधीवाद के बजाय गाँधीगिरी से आम लोगों के बीच जाकर जुड़ते है। एक समीक्षक कहते हैं "फिल्म में दादागिरी करता मुन्नाभाई जब गाँधीगिरी पर उतरता है तो इससे गाँधी की गरिमा को चोट नहीं पहुँचती बल्कि उनकी कथनी करनी में एकरूपता की प्रामाणिकता पुष्ट होती है और साथ ही उनकी प्रासंगिकता भी।" निर्देशक मानो यह बताना चाहते हैं कि वे गंभीर, भारी भरकम शब्दों के जाल में दर्शकों को उलझाना नहीं बल्कि फिल्म में निहित उद्देश्य को दर्शकों तक पहुँचाना चाहते हैं।

फिल्म का कुछ दृश्य दर्शकों के बीच हास्य तो रचता है लेकिन उससे अधिक व्यंग्य भी मुखरित करता है शब्दाडंबर की बोझिलता की कलई भी खोलता है यह भी कह सकते हैं युगानुरूप आवश्यकता व मानसिकता को देखकर विषय को लोगों तक उसी रूप में पहुँचाना चाहता है। इसीलिए फिल्म के अंतिम दृश्य में जब जाह्नवी मुन्ना से कहती है 'गाँधी पर ज्ञान बांटने वाले तो कई प्रोफेसर देखे किंतु गाँधीगिरी करने वाला केवल एक।'

पूरी फिल्म यह बताती है कि गाँधी–दर्शन या गाँधीवाद का रट्टा मारना गाँधी का जीवन में उतारना नहीं है।

'लगे रहो मुन्ना भाई' फिल्म गाँधी को जमीन में उतारने और अवाम से जोड़ने का प्रयास करती है। व्यंग्य के माध्यम से गाँधी शब्द की स्वार्थपूर्ण उपयोगिता को बेनकाब करती है। इस फिल्म में गाँधी और

Scanned with CamScanner

गाँधीगिरी के अलावा बहुत कुछ प्रदर्शित है। गाँधी और गाँधीगिरी के बहाने बाजार और व्यावसायिकता के लपेटे में आते जा रहे जीवन की विसंगतियाँ, व्यक्तिगत स्वार्थपरता, नफे–नुकसान के बीच तोलती जिंदगी, को यह फिल्म दिखाती है।

'लगे रहो मुन्ना भाई' समाज के कई विषयों को उभारती है। उपेक्षित बुजुर्ग, शेयर बाजार के आकर्षण में फंसकर सब कुछ गँवाने वाले युवा, बिना रिश्वत दिए सरकारी दफ्तरों में धूल खाती फाइलें, ज्योतिष के बटुक महाराज जैसे धंधेबाजों की कलई खोलती है।

यह लगे रहो मुन्नाभाई फिल्म की समीक्षा का एक पहलू है।

इस फिल्म की समीक्षा में और भी विचार रखे गए जिसका उल्लेख कुछ इस प्रकार है।

कुछ समीक्षक यह भी कहते हैं कि गाँधीगिरी व गाँधीवाद में फक्र करना पड़ेगा। मीडिया और कुछ बुद्धिजीवियों ने गाँधीगिरी शब्द का प्रयोग किया। केवल गाँधी टोपी पहन लेना ही गाँधीगिरी नहीं है। हृदय परिवर्तन स्वाभाविक रूप से आवश्यक है दबाव या आतंक के द्वारा नहीं।

राधेश्याम कहते हैं "इस फिल्म में यह कैसा संदेश है कि यदि लड़की पटाना हो तो गाँधी की पुस्तकें पढ़िए। कोई विशेषज्ञ बता सकता है कि गाँधी ने ऐसा कब कहा था और अपनी आत्मकथा के किस पृष्ठ पर लिखा है कि जीवन में लड़की को पाना हो तो मुझे पढ़ो या रिश्वतखोर अधिकारी को सुधारना हो तो उसके कमरे में अपने कपड़े उतार दो।

"लगे रहो मुन्ना भाई में यह दिखलाया गया है कि जो गाँधी की किताबें पढ़ने लगता है उसे गाँधी दिखलाई देते हैं ? क्या इसकी वैज्ञानिकता सही है ? इसका सत्यापन कौन करेगा ? ..... सवाल यह उठता है कि यदि आपने प्रेमचंद की किताबें पढ़ी होंगी तो कितने लोगों ने अनुभव किया होगा कि उसकी कल्पना में प्रेमचंद की एक तस्वीर हमेशा साथ–साथ डोलती रहती होगी ? "[4] अतः फिल्म यह साबित करना चाहती है कि गाँधी की पुस्तकें पढ़ने से गाँधी जी की आत्मा साक्षात नजर आने लगती है इससे बड़ा व्यंग्य क्या हो सकता है ? गाँधी की अहिंसा की बात करने वाला इस फिल्म का नायक संजय दत्त

Scanned with CamScanner

गाँधी के सारे उपदेश और निर्देश को भूलकर दारू भी पीता है और खलनायक की बेटी की शादी कराने के लिए रिवाल्वर भी कनपट्टी पर लगाने को कह देता है। यहाँ फिल्म में गाँधीवाद का विरोध नजर आता है।

समीक्षा के अलग – अलग विचारात्मक पहलुओं को यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

लगे रहो मुन्ना भाई का उद्देश्य मुनाफा कमाना भी है किंतु यह फिल्म दर्शकों की भावनाओं को जगाती है, उन्हें संवेदनशील बनाती है। सवालों के हल भी तलाशती है। सवालों से मुठभेड़ करने की ताकत और विमर्श भी विकसित करती है। सवालों से जूझती – टकराती है। हास्य – व्यंग्य के साँचे में ढली संजीदा और गंभीर फिल्म भी है। समाज के बदलते परिदृश्य को लेकर उससे सामना करने का मार्ग दिखाने का प्रयास करती है। अभिनय, कथ्य, दृश्य, संवाद गहरे तक असर करती है। बौद्धिक जड़ता से नीचे उतरकर दुनिया की वर्तमान घटनाओं और परिस्थितियों के बीच चलने का मार्ग बताने का प्रयास करती है। यह भी बताती है कि दुनिया में क्या हो रहा है।

संदर्भ

1. वसुधा – 81, पृष्ठ – 525
2. वसुधा – 81, पृष्ठ – 526
3. हिंदी सिनेमाः बीसवीं से इक्कसवीं सदी तक पृ. 533
4. वही

❑

Scanned with CamScanner

हिंदी साहित्य और गाँधीवाद

संपादक
प्रो. शैल शर्मा
डॉ. मधुलता बारा
डॉ. गिरजा शंकर गौतम

ABS
ए.बी.एस. पब्लिकेशन
वाराणसी-07

Scanned with CamScanner

10 गाँधीयुगीन नवजागरण और छायावाद

डॉ. अभिषेक कुमार पटेल

छायावाद नवजागरण की चेतना से सम्पन्न काव्यान्दोलन है। छायावादी आंदोलन भारतीय राजनीतिक धरातल पर स्वाधीनता संघर्ष के नवआंदोलनों का दौर है। कई आलोचकों ने छायावाद को गाँधीवाद की काव्याभिव्यक्ति माना है। छायावाद के युगीन भावबोध के विषय में विश्वनाथ त्रिपाठी का विचार है कि "छायावाद भक्तिकाव्य के बाद सबसे महत्त्वपूर्ण काव्य आंदोलन है। भक्तिकाव्य का आधार भक्ति आंदोलन था छायावाद का स्वाधीनता आंदोलन। छायावादी युग के साहित्य में हिंदी प्रदेश का विषम यथार्थ और विषमता से रहित स्थिति का स्वप्न दोनों सह स्थिति एवं अभिव्यक्ति है। इसलिए इसी दौर में प्रेमचंद, प्रसाद, निराला, शुक्ल आदि जैसी विभूतियाँ समकालीन हैं। विषम यथार्थ प्रेमचंद के कथा साहित्य में चित्रित है तो स्वप्न छायावादी काव्य है। स्वप्निल स्वप्न नहीं, यथार्थ स्वप्न। पराधीन भारत का स्वातंत्र्य स्वप्न।"

छायावाद का संपूर्ण रचना कर्म स्वतंत्रता के केंद्रीय चिंतन से युक्त है। निराला का "वर दे वीणा वादिनी वर दे" वंदना पारलौकिक अर्थों से भिन्न आधुनिक संदर्भों से संपृक्त है

> प्रिय स्वतंत्र रव अमृत मंत्र नव, भारत में भर दे।
> काट अंध — उर के बंधन स्तर बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर।

निराला स्वाधीनता के अमृत मंत्र को पराधीन भारत में उद्घोषित करते हैं। ब्रिटिश सत्ता के नियंत्रण में भारत की मानसिक मुक्ति का यह रचनात्मक साक्ष्य है। निराला बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि किसी भी समाज की वैचारिक जड़ता को समाप्त करके ही लौकिक मुक्ति संभव है। उन्होंने जाति, संप्रदाय, भाषा और अनेक अनर्थकारी सामंतवादी हठ, ढाँचे को तोड़कर स्वाधीनता के निर्झर बहाने के लिए माँ भारती की वंदना करते हैं।

छायावादी युग का सबसे विश्वसनीय विश्लेषण नामवर सिंह ने सामने रखा। उन्होंने इस युग के विषय में लिखा है कि "छायावाद इस राष्ट्रीय चेतना की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी पीढ़ी से मुक्ति चाहता है और दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से।"

Scanned with CamScanner

जागरण और छायावाद

– डॉ. अभिषेक कुमार पटे

ी चेतना से संपन्न काव्यान्दोलन है
जनैतिक धरातल पर स्वाधीनता संघर्ष
लोचकों ने छायावाद को गाँधीवाद की
यावाद के युगीन भावबोध के विषय
कि 'छायावाद भक्तिकाव्य के बाद सब
क्तिकाव्य का आधार भक्ति आंदोलन था
न। ...छायावादी युग के साहित्य में हिंदी
नता से रहित स्थिति का स्वप्न दोनों सा
गए इसी दौर में प्रेमचंद, प्रसाद, निराला
मकालीन है। विषम यथार्थ प्रेमचंद के
दप्न छायावादी काव्य है। स्वप्निल स्वा
रत का स्वातंत्र्य स्वप्न।''

कर्म स्वतंत्रता के केंद्रीय चिंतन से पुन
दिनी वर दे' वंदना परालौकिक अर्थों से
है –

त नव, भारत में भर दे।
न स्तर बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर।
त मंत्र को पराधीन भारत में उद्घोषित
ण में भारत की मानसिक मुक्ति का प
हुत अच्छी तरह जानते हैं कि किसी
समाप्त करके ही लौकिक मुक्ति सम्भ
और अनेक अनर्थकारी सामंतवादी रू
निर्झर बहाने के लिए माँ भारती की वंदन

विश्वसनीय विश्लेषण नामवर सिंह ने
विषय में लिखा है कि ''छायावाद इस
भिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी पीढ़ी से
विदेशी पराधीनता से।''

छायावाद की इस सर्वमान्य परिभाषा में दो चीजें उभरकर सामने आती हैं। प्रथम, छायावाद राष्ट्रीय जागरण का काव्य है और दूसरा पुरानी पीढ़ियों और विदेश पराधीनता से मुक्ति पाना इसका मूल लक्ष्य है। इस तरह देखा जाए तो राष्ट्रीय जागरण और पुरानी पीढ़ियों और विदेशी पराधीनता से मुक्त स्वाधीन भारत की प्राप्ति आदि सभी नवजागरण की विशेषता है। छायावाद प्रमुख रूप से राष्ट्रीयता का काव्य है। छायावाद में राष्ट्रीयता की मूल प्रवृति को लक्ष्य करते हुए आचार्य नंददुलारे वाजपेयी जी ने लिखा है कि ''खेद और आश्चर्य की बात है कि हमारे कतिपय समीक्षकों ने इस अत्यंत सीधी और सच्ची बातों को कभी समझने की चेष्टा नहीं की कि हमारे इस युग के साहित्य की मुख्य प्रेरणा राष्ट्रीय और सांस्कृतिक है तथा इससे भिन्न वह और कुछ हो भी नहीं सकती थी। राष्ट्रीयता ने हमारे जीवन को अनेक रूपों में आलोकित कर रखा था और हमारे कवि और लेखक भी इस दुर्दमनीय प्रयास से बच नहीं सकते थे।''

राष्ट्रीयता के विकास के लिए जयशंकर प्रसाद ने अतीत की ओर दृष्टि दौड़ाई। अपनी कविताओं तथा नाटकों में इन्होंने भारत के स्वर्णिम इतिहास को चित्रित किया। स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त तथा ध्रुवस्वामिनी आदि नाटकों के माध्यम से वर्तमान सामाजिक चुनौतियों के सामने अपना प्रतिरोध दर्ज कराया। प्रादेशिकता और विभिन्न विचारधाराओं के तनाव से गुजर रहे भारतीय स्वाधीनता संघर्ष को इससे अधिक प्रेरक संदेश कौन दे सकता है, जो चंद्रगुप्त नाटक के माध्यम से चाणक्य कहता है कि :

'मालवा और मगध को भूलकर जब तुम आर्यावर्त का नाम लोगे, तभी वो मिलेगा।'

अर्थात आर्यावर्त की स्थापना विभिन्नता को छोड़कर स्वाधीनता के केंद्रीय लक्ष्य की ओर प्रयत्न करके ही मिलेगा। यहाँ आर्यावर्त अखंड भारत का प्रतीक है इस नाटक में अनेक गीत प्राचीन भारत के गौरव से युक्त हैं। नारी जागरण से सशक्त स्वर लेकर अलका संपूर्ण राष्ट्र के युवकों का ललकार भरा आह्वान करती है

हिमाद्रि तुंग–श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला, स्वतंत्रता पुकारती।
अमर्त्यवीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञा सोच लो प्रशस्त पुण्य पंथ है –
बढ़े चलो, बढ़े चलो।।

Scanned with CamScanner

का पर्याय बन जाता है। निर्झरणी, बादल, पर्वत, नदियाँ सभी मुक्ति के प्रेरणा पुंज बन जाते हैं। निराला की मुक्त छंद की अवधारणा मनुष्य के मुक्ति के आशय से युक्त है। पंत ने पल्लव की भूमिका में ब्रजभाषा का विरोध और खड़ी बोली का समर्थन किया। यह चेतना नवजागरण की पुकार है।

आचार्य हजारी प्रसादी द्विवेदी नवजागरण की चेतना के संदर्भ में लिखते हैं– मध्यकालीन भक्ति आंदोलन के पश्चात शनैःशनैः भारत की प्राण–शक्ति का ह्रास हुआ, जिजीविषा और रचनात्मक प्रतिभा कुण्ठित होने लगी, बौद्धिकता का प्रवाह रूद्ध होने लगा। उन्नीसवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध बीतते ना बीतते कुछ –कुछ सुगबुगाहट हलचल और क्रियाशीलता के चित्र दिखाई पड़ने लगे। बौद्धिक और लौकिक संस्कृत शास्त्रों का अनुसंधान, संकलन और संपादन किया जाने लगा। यह भारतीय गौरव के पुनरूद्धार का समय है।

यह वह समय था जब भारतीय जनमानस का महामंथन कर डाला गया, जिसने भारत के भविष्य को इतिहास के मंच पर अब तक की सबसे मूल्यवान रत्न राष्ट्रीय स्वतंत्रता से नवाजा। आधुनिक भारतीय नवजागरण 1857 ई. के स्वाधीनता संग्राम से आरंभ होता है जो पूरे देश में एक साथ लड़ा गया। बादशाहों, नवाबों और राजाओं के साथ सेना या जनता ने हिंदू – मुसलमान का भेद–भाव खोकर फिरंगियों पर धावा बोल दिया।

संदर्भ

1. आजकल पत्रिका स्वर्णजयंती अंक, 1994, पृ.4
2. नामवर सिंह, छायावाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.17
3. नन्द दुलारे वाजपेयी, आधुनिक साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृ. 22
4. हजारी प्रसाद द्वेदी, हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृ.408

❑

Scanned with CamScanner

भारतीय साहित्य : चिन्तन और चुनौतियाँ

Scanned with CamScanner

भारतीय साहित्य

चिन्तन और चुनौतियाँ

सम्पादक

मनोज पाण्डेय

ए.आर. पब्लिशिंग कम्पनी

दिल्ली

Scanned with CamScanner

भारतीय साहित्य के विविध आयाम : अध्ययन की चुनौतियाँ

डॉ. श्रद्धा चन्द्राकर, डॉ. भुवाल सिंह ठाकुर
डॉ. पूनम, डॉ. अभिषेक पटेल

भारतीय साहित्य भारत की मूलभूत एकता का प्रतीक है। भारत की भौगोलिक विस्तार और सामाजिक, सांस्कृतिक विविधता की बयार के बीच भारतीय साहित्य के जीवन-मूल्य व्यापी प्रेरणा का प्रतीक है। विभिन्न क्षेत्रों के भाषाभाषी जैसे उत्तर पश्चिम भाग में पंजाबी, हिन्दी और उर्दू। पूर्वी हिस्से में उड़िया, असमिया और बंगला। मध्य-पश्चिम में गुजराती और मराठी। दक्षिण भाग में तमिल, तेलुगु, और मलयालम। इसके अतिरिक्त कोंकणी, सिंधी, डोंगरी, कश्मीरी और अनेक भाषाओं के साथ साथ, भाषाओं का सम्पूर्ण भारतीय साहित्य की विपुलता की सर्वश्रेष्ठ रचना है। भारतीय साहित्य के इस विशाल विस्तार के पीछे 2000 वर्षों के सतत् साहित्यिक परम्परा का विशेष योगदान रहा है। भारतीय साहित्य की गौरवशाली विकास परम्परा को विस्तार से देखा जाना जरूरी है।

संस्कृत की आधार पीठिका

संस्कृत साहित्य पर दृष्टिपात करें तो पाते है कि संस्कृत साहित्य के दो प्रमुख रूप है। प्रथम वैदिक संस्कृत और द्वितीय लौकिक संस्कृत। वैदिक के अंतर्गत ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद संहिताओं के अतिरिक्त ब्राहमण ग्रन्थ, आरण्यक और उपनिषद आते है।

ऋग्वेद दस मण्डलों में विभाजित है। इसमें कुल 1028 सूक्त संकलित है मंत्रों में देवों की प्रार्थना, उपासना और स्तुतिपरक भाव मिलते है। ऋग्वेद की दो शाखाएँ

Scanned with CamScanner

प्रसिद्ध हैं–शुक्ल यजुर्वेद एवं कृष्ण यजुर्वेद। शुक्ल यजुर्वेद में 40 अध्याय हैं। जबकि कृष्ण यजुर्वेद में चार शाखाएँ मानी गयी हैं। यजुर्वेद के मंत्रों का मूल विनियोग यक्ष के लिए मानी जाती हैं। यजुर्वेद में ऋग्वेद के बहुत से मंत्र लिए गये हैं। यजुर्वेद का अधिकांश भाग पद्य में हैं कहीं-कहीं ही गद्य का प्रयोग देखने को मिलता हैं। सामवेद में ऐसे मंत्रों का संकलन हैं। जो गान की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। सामवेद में संकलित 75 मंत्र ही सामवेद के हैं। बाकी मंत्र ऋग्वेद से लिए गये हैं। अथर्ववेद की बात करें तो इसकी दो शाखाएँ मिलती हैं। एक शौनक और दूसरा पैप्पलाद। अथर्ववेद की विषय वस्तु शेष तीन वेदों से सर्वथा भिन्न हैं। अथर्ववेद में जादू, टोना, वशीकरण आदि से सम्बन्धित मंत्रों का समावेश हैं। साथ ही इसमें राष्ट्र प्रेम से सम्बन्धित युक्त भी मिलते हैं। विद्वानों का मत है कि अथर्ववेद एक भिन्न स्तर की रचना हैं और काल तथा संस्कृति की दृष्टि से ऋग्वेद से यथेष्ट दूर हैं। यह निर्विवाद है कि इन चारों वैदिक संहिताओं में ऋग्वेद संहिता सबसे पुरानी हैं। ऋग्वेद में भी प्रथम और दशम दो मण्डल के मालुम होते हैं।"[1]

अब बात आती है ब्राह्मणग्रन्थों की। ब्राह्मणगन्थों में मूल रूप से कर्मकाण्ड के मुख्य प्रश्नों पर समाधान और विचार संकलन मिलता हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों के माध्यम से हमें यज्ञ की प्रकृति के अनुसार मंत्र प्रयोग की रीति का पता चलता है। प्रत्येक वेद के ब्राह्मण गन्थ हैं। जैसे ऋग्वेद के ऐतरेघ और कौषीतिकी। शुक्ल यजुर्वेद का शतपथ ब्राह्मण। इसी प्रकार आरण्यक ग्रन्थ भी प्रत्येक वेद के अलग-अलग हमें मिलते हैं। वेद, ब्राह्मण और आरण्यक का मुख्य विषय कर्मकाण्ड का प्रतिपादन है। इन ग्रन्थों में कर्मकाण्ड की दृष्टि का मन्त्रपरक, विधिपरक और अर्थवादपरक व्याख्या प्राप्त होती हैं।

संस्कृत साहित्य के अंतर्गत उपनिषदों का अपना महत्व है। उपनिषद कर्मकाण्ड से कोसों दूर हैं। उपनिषद का मूल विषय ईश्वर और प्रकृति के परस्पर सम्बन्धों की व्याख्या हैं। उपनिषद मुक्ति की बात को वरीयता देता हैं–''कर्मकाण्ड के सम्यक पालन से स्वर्ग की प्राप्ति होती हैं, किन्तु ईश्वर, जीव और प्रकृति का ठीक-ठीक स्वरूप और सम्बन्ध जान लेने से मुक्ति मिलती हैं, जिसमें शाश्वत आनन्द है। इसी ज्ञान को ब्रहतविद्या कहते हैं।'' यह ब्रहतविद्या ही उपनिषद हैं। कुल 108 उपनिषद माने गये है। इन 108 उपनिषदों में ईश, कठ, केन, प्रश्न, श्वेतावर, मुण्डक, माण्डूक्य, वृहदारण्यक, छान्दोग्य, ऐतरेथ, तैत्तिरीय, मैत्रायण, और कौषीतिकी, प्राचीन है, शेष अर्वाचीन है।

Scanned with CamScanner

वेद के सन्दर्भ में भारतीय साहित्य की चर्चा करते हुए वेदांग पर भी बातचीत जरूरी हैं। वेदाध्ययन के लिए वेदांगों का अध्ययन परम आवश्यक था। वेदांग 6 हैं—शिक्षा, व्याकारण, छन्द, निरूक्त, ज्योतिष और कल्प। शिक्षा के अंतर्गत वेद में प्रयुक्त ध्वनियों का अध्ययन किया जाता था। व्याकरण के अंतर्गत पदों के विश्लेषण की सम्यक ज्ञान मिलता है। छन्द में वैदिक मंत्रों का पद-विभाजन की विवेचना की जाती हैं। निरूक्त में वैदिक शब्दों की अर्थों की व्याख्या है। ज्योतिष में काल-सम्बन्धी ज्ञान चर्चा हैं। और कल्प के अंतर्गत कर्मकाण्ड का विवरण मिलता हैं।

संस्कृत में वैदिक साहित्य के बाद इतिहास से संबंद्ध ग्रन्थों का विशेष महत्व हैं। इस श्रेणी में 'महाभारत' और 'रामायण' विशेष महत्व के हैं। भाषायी एवं शैलीगत दृष्टिकोण से महाभारत का समय रामायण से पहले का हैं। एक ओर जहाँ रामायण का युग त्रेता हैं। वही महाभारत की विषय वस्तु कौरव-पांडव युद्ध से सम्बन्धित द्वापर युग से सम्बन्धित हैं। महाभारत 18 पर्वों में विभक्त आख्याणपरक रचना हैं। महाभारत के विषय में हिन्दी साहित्य कोश में लिखा गया हैं—"ज्ञान विज्ञान की दृष्टि से यह एक ऐसा भण्डार है इसमें मनुष्य की जिज्ञासा को तृप्त करने के लिए प्रायः सभी सामग्री मिल जाती हैं।"

इसीलिए इसे पांचवा वेद भी कहते हैं। इसी ग्रन्थ का एक अंश 'भगवद्गीता', जिसमें 18 अध्याय हैं। निश्चय ही यह 18 अध्यायों की गीता युद्ध-भूमि में नहीं सुनायी जा सकी होगी। कृष्ण द्वारा अर्जुन को दिये गये उपदेश को सारभूत मानकर महाभारतकार की यह रचना हैं—"महाभारत के रचनाकार कृष्ण हैं। पायन (वेदव्यास) को माना जाता हैं। "

रामायण को आदिकाव्य की संज्ञा से विभूषित किया जाता है और इसके रचनाकार वाल्मिकी को आदि कवि की। भारतीय परम्परा में ऐसी मान्यता है कि वेद से बाहर छंदरचना का विधान सर्वप्रथम इस महाकाव्य में हुआ। रामायण सात काण्डों में विभक्त हैं। यह भारतीय साहित्य परम्परा का प्रथम महाकाव्य हैं। रामायण के नायक धीरोदात्त गुण से सम्पन्न राम हैं। वाल्मिकी के राम लौकिक गुणों से युक्त हैं रामायण में मनुष्य और प्रकृति के सम्बन्धों पर विशद् चर्चा की गयी हैं।

भारतीय परम्परा के अनुसार नाट्य के प्रथम रचयिता भरत मुनि है, जिन्होनें जनसाधारण के उपकारार्थ नाट्य वेद बनाया। इन्हीं के नाम से प्रसिद्ध 'नाट्यशास्त्र' नाम का ग्रन्थ प्राप्त है, जो भाषा और शैली आदि दृष्टि से ईसवी तीसरी शताब्दी के पूर्व का नहीं माना जाता। नाट्य के किसी न किसी रूप के सृर्जन का प्रथम उल्लेख

Scanned with CamScanner

हमें पतंजली के 'महाभाष्य' में मिलता है। और उपलब्ध नाट्य साहित्य में अश्वघोष का 'शारद्वती पुत्र-प्रकरण' (सारिपुत्त प्रकरण) और कालिदास की कृतियाँ (अभिज्ञान शाकुन्तल, विक्रमोवर्शीय, मालविकाग्निमित्र) सर्वप्रथम आती है। कालिदास न केवल भारत के सर्वश्रेष्ठ कवि है, बल्कि सर्वश्रेष्ठ नाट्य रचयिता भी है। इनके स्थिकि काल के विषय में मतभेद है, किन्तु अधिकांश विद्वान उन्हें चन्द्रगुप्त द्वितीय (चतुर्थ शताब्दी ईसवी के उत्तरार्ध और पंचम के पूर्वाद्धी) के समय का मानते हैं। कालिदास ने भास, सौमिल्ल, कविपुत्र आदि नाट्यकारों का उल्लेख किया है, इनमें से भास के 'स्वप्नवासवदत्ता' का एक संस्करण 'स्वप्ननाटक' के नाम से गणपती शास्त्री को प्राप्त हुआ था। इनके साथ 'प्रतिज्ञायौगन्धरायण', 'चारू-दत्त' आदि 12 अन्य नाट्यग्रन्थ भी मिले थे। शास्त्री जी इन सबको भासकृत मानते थे। सम्भव है, इनमें से कुछ अपने मूल रूप में भासकृत रहे हों। शैली की दृष्टि से 'मृच्छकटिक' भी पुराना रूपक है। और इसकी रचना कर समय कालिदास के कुछ ही बाद माना जाता है। श्रीहर्ष का एक नाटक 'नागानन्द' और नाटिकाएँ 'रत्नावली' और 'प्रियदर्शिका' प्रसिद्ध है। ये श्रीहर्ष महाराज हर्षवर्धन ही है। इनके उपरान्त भवभूति आते हैं, जिनका स्थान नाटककार की दृष्टि से कालिदास के बाद आता है इनके दो नाटक 'महावीरचरित' और 'उत्तररामचरित' तथा एक प्रकरण 'मालतीमाधव' उपलब्ध थे। ये यशोवर्मा के समकालीन थे। इनके अतिरक्त भट्टनारायण का 'वेणीसंहार', विंशाखदत्त का 'मुद्राराक्षस', मुरारिका 'अनर्धराघव', जयदेव का 'प्रशन्नराघव' आदि अन्य प्रशिद्ध नाटक है। नाटकों के अतिरिक्त संस्कृत में 'प्रबोध चन्द्रोदय; आदि रूपकात्मक नाटक और 'धर्मशर्माभ्युदय' आदि छायानाटक भी है। 'हनुमन्नाटक' भी एक लोकप्रसिाद्ध ग्रन्थ है, यद्यपि वह नाटक नहीं है।

संस्कृत का कथा-साहित्य अत्यन्त प्राचीन है। वैदिक संहिताओं में जहाँ-तहाँ कथाएँ मिलती है। ब्राह्ाण ग्रन्थों और आरण्यकों में इनकी मात्रा और अधिक हो गयी है। इस श्रेणी के साहित्य में सबसे प्राचीन ग्रन्थ 'वृहतकथा' है। इसकी रचना पैशाची प्राकृत में गुणढ्य ने की थी। इस ग्रन्थ का मूल रुप अप्राप्य है, किन्तु इसके दो संक्षिप्त संस्करण 'वृहत्कथामंजरी' और कथासरित्सागर प्राप्त है बृहत्कथामंजरी के लेखक क्षेमेन्द्र और 'कथासरित्सागर' के लेखक सोमदेव 11वीं शताब्दी ईसवीं में हुए। इन दो प्रसिद्ध ग्रन्थों के अतिरिक्त 'बृहत्कथा' पर आधारित बुद्धस्वामी का श्लोकसंग्रह है, जिसमें क्षेमेन्द्र और सोमदेव की तथा सभेद है। इनके अतिरिक्त 'अवदानशक्त' और आर्य सुरकृत जातकमाला' बौद्ध धर्म-प्रचारक बोधिसत्व के चरितों के कथा-संग्रह , 'वेतालपंचविशतिका', 'सिंहासनद्वत्रिशतिका', 'शुकसप्तति'

Scanned with CamScanner

और 'भोजप्रबन्ध' अन्य कथा संग्रह है, जिनमें कल्पना और अतिमानवचरित मुख्य रूप से दृष्टिगोचर होते हैं।

पालि (भाषा तथा साहित्य)

पालि शब्द सम्बन्ध विद्वानों ने पंक्ति, परिचय, पालि, पाटलिपुत्र आदि से बतलाया है, किन्तु इसकी वास्तविक व्युत्पत्ति के 'रक्षा करने' के अर्थ में 'पा' धातु से मानना युक्तियुक्त हैं। जिसमें बुद्ध-वचनों की रक्षा की गयी हैं। वह पालि है—पा रखतीति बुद्धवचन इति पालि। इसमें व्याकरण का ढ़ाचां मध्यदेश की भाषा का हैं। पालि में ही त्रिपिटक की रचना हुई हैं। त्रिपिटिक के अंतर्गत 'सुन्त' विनय तथा 'अभिधम्म ' पिटक आते हैं। त्रिपिटकेतर साहित्य के दो युग-प्रथम युग और द्वितीय युग किये जा सकते हैं। प्रथम युग की सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचना 'मिलिन्दपनहो' (मिलिन्दप्रश्न) हैं। इसमें राजा मिलिन्द तथा भिक्षु नाग सेन के प्रश्नोत्तर हैं। पालि में त्रिपिटकेतर साहित्य का दूसरा युग 5 वीं से 11वीं शताब्दी तक माना जाता है इस द्वितीय युग का आरंभ त्रिपिटक (अट्ठकथाओं) से होता हैं। अट्ठकथा साहित्य के प्रणेता आचार्य बुद्ध घोष बतलाए जाते हैं।

प्राकृत (साहित्य)

पहली सदी से 500 ई. तक उत्तर भारत के भिन्न-भिन्न भागों में जिस भाषा का व्यवहार अधिक हुआ हैं, उसे 'प्राकृत' भाषा कहते हैं। 'रावणवध' (रावणवध) महाराष्ट्री प्राकृत का अत्यधिक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसका अनुवाद संस्कृत में 'सेतुबन्ध' के नाम से हुआ हैं। इसका अन्य नाम 'दहमुद्धहो' भी हैं। यह सातवीं शताब्दी के पूर्व की रचना है, क्योंकि बाण रचित 'हर्ष-चरित' की भूमिका में 'सेतु' नाम से इसका उल्लेख मिलता हैं। महाराष्ट्री प्राकृत का दूसरा महाकाव्य 'गउडवही' हैं, जिसके रचयिता 'बप्पइराअ' वाक्रपतिराज हैं। ये कनौज के राजा यशीवर्मन के आमित कवि थे। खण्डकाव्य के अंतर्गत 'उषाणिरूह' तथा 'कंसवहो' मुख्य रचनाएँ जिनके रचयिता केरलवासी रामपाणिवाद हैं। पहले में उषा-अनिरूद्ध के प्रेम प्रसंग तथा विवाह का वर्णन दूसरे में कृष्ण की बाल क्रीड़ा तथा कंसवध का वर्णन हैं। मुक्तक काव्य के अन्तर्गत 'गाहासत्तसई' (गाथासप्तशती), 'वज्जालग्ग' प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। दोनों में सात सौ से ऊपर गाथाएँ संगृही हैं। इसके संग्रहणकर्ता दक्षिण के कोई महाराज सातवाहन अथवा कवि वत्वल माने जाते हैं। जैन महाराष्ट्री कथा

Scanned with CamScanner

साहित्य के अंतर्गत 'समराइच्च्कहा' (समराहित्यकथा), 'कथाकोशप्रकरण' , 'धूर्ताख्यान' कथा-महोदधि, 'विजययन्द्रकेवलिन' आदि प्रसिद्ध आख्यायिक–ग्रन्थ हैं। इनमें बाणकी कादम्बरी के समान शैली के उत्कृष्ट नमूने यत्र तत्र मिलते हैं।

'तरंगवती', 'सुरसुन्दरीचरिज', 'कालक्राचार्यकथानक', 'सिरिसरिबालकहा' (श्रीपालकथा) 'रयनसेहरकहा' (रतशेषरकथा) आदि प्रसिद्ध कथा–ग्रन्थ हैं, जिसमें कहीं-कहीं पद्यात्मक शैली का भी प्रयोग हैं। चरित साहित्य के अंतर्गत 'पउमचरिय' (पद्यचरित), वासुदेवहिण्डी, 'कुमारपालचरित' आदि मुख्य रचनाएँ हैं। इन रचनाओं का काल तीसरी शताब्दी से लेकर 14 वीं शताब्दी तक निर्धारित किया गया हैं।

जैन धर्म सम्बन्धी अधिक रचनाएँ अर्धगामी प्राकृत में उपलब्ध होती हैं। इसमें सिद्धांत ग्रन्थ तथा टीकाएँ, दोनों सम्मिलित हैं। विद्वानों ने सिद्धांत ग्रन्थों को आगम साहित्य तथा इतर सिद्धांत ग्रन्थों को आगमेतर साहित्य के अंतर्गत विभाजित किया जाता हैं। वर्धमान महावीर ने अर्धमागधी में अपने उपदेश दिये, इसके अनेक उल्लेख मिलते हैं। आगम ग्रन्थों का विभाजन अंग, उपांग, सूत्र आदि भेदों में मिलता हैं। इनकी संख्या 12 हैं। इनमें गद्य-पद्य, दोनों का व्यवहार किया गया हैं।

जैन शौरसेनी में दिगम्बर सम्प्रदायिकों की कई प्रसिद्ध रचनाएँ मिलती हैं। 'पवयणसार' (प्रवचनसार), 'समयसार' , 'नियम-सार', छप्पाहुड (षट्प्राकृत), कृतिगेयाणु पेक्खा 'मूलाचार ', मूलाराधना, श्रावकाचार, दर्शनसार, आराधनासार, ' जीवविचार ' आदि पद्यात्मक रचनाएँ है। षटखण्डागम 'काषाय' प्रभिमि प्रसिद्ध सूत्र-ग्रन्थ है।

भास-रचित 'चारूदत्त', ' कालिदास के 'अभिज्ञानशाकुन्तल ', 'मालविकाग्निमित्र' विक्रमोर्वशीय' श्री हर्ष के प्रिय-दर्शिका, 'रत्नावली' , शूद्रक के 'मृच्छकटिक' आदि नाटकों में प्राकृत का प्रचूर प्रयोग हुआ है। इस संस्कृत नाटकों में प्राकृत भाषा का व्यवहार स्वाभाविक कहा जा सकता है, क्यों कि उनके काल में प्राकृत लोकभाषा के रूप में प्रतिष्ठित थी। नाटक का एक भेद सद्दक है, जिसमें स्त्री पात्रों की प्रधानता और पूर्ण रचना प्राकृत में होती है। 'कर्पूरमंजरी', 'रम्भामंजरी', चप्द्रलेहा (चन्द्रलेखा), 'शृंगारमंजरी', आनन्द सुन्दरी आदि ऐसी ही रचनाएँ है।

अपभ्रंश (साहित्य)

सन 1000 से भारतीय आर्यभाषा नये युग में प्रवेश करती है। मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा का चरम विकास 'अपभ्रंश' में हुआ। जब वरूरुचि जैसे प्राकृत के वैयाकरण ने प्राकृतों व्याकरण के साँचे में ढाल दिया, लोकभाषा (अपभ्रंश) में परिनिष्ठ

Scanned with CamScanner

संस्कृत साहित्य के साथ इसके संवाद ने भारतीय साहित्य चिन्तन परम्परा को जोड़े रखा। आधुनिक काल का आरंभिक दौर, नवजागरण आंदोलन ने पुनः इस संवाद को तीव्र गति प्रदान की। मराठी, बंगाली, संस्कृत, उर्दू और हिन्दी भाषा साहित्य और समाज आपस में अनुभवन साझा करता हुआ दिखता हैं। आजादी के बाद यह प्रक्रिया धीरे-धीरे शिथिल होने लगी। 1960 के दशक में होने वाले हिन्दी विरोधी आंदोलन में इस संवाद की प्रक्रिया को और बाधित किया। आज के युग में जिस तेजी से हम वैश्विक संस्कृति से जुड़ रहें हैं वह तेजी भारतीय साहित्य के साथ जुड़ाव में नदारद है। अगर भारतीय संस्कृति के साथ भारतीय साहित्य की अवधारण को मजबूत करना है तो सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य को आपस में संवाद की प्रक्रिया तीव्र करना पड़ेगा। इस प्रक्रिया में बेहतर अनुवाद सबसे बड़ा सहायक हो सकता हैं। भारतीय साहित्य के निर्माण में अनुवाद प्राचीन काल से ही अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते आ रही हैं। रामायण, महाभारत, काव्यशास्त्र, पंचतंत्र आदि ग्रन्थों का भावानुवाद लगभग सभी भारतीय भाषाओं में देखने को मिलता हैं हाँ ये अलग बात है कि अनुवाद करने वाले कवियों ने अपने क्षेत्र भाषा और विचार के अनुरूप उसमें परिवर्तन भी किये चाहे वह तुलसी का रामचरित मानस हो या फिर कंब रामायण या बंग रामायण। अनुवाद ने भारतीय साहित्य शास्त्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं परन्तु यह दुखद है कि आज हम हिन्दी साहित्य में विश्व के दूसरी भाषाओं के श्रेष्ठ साहित्य का अनुवाद तो कर रहें हैं परन्तु भारतीय भाषाओं के साहित्य के मामले में पिछड़ते जा रहे हैं।

भारतीय साहित्य के अध्ययन के दिशा में दूसरी महत्वपूर्ण चुनौती है विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में अपने भाषा के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं के अध्ययन एवं अध्यापन के प्रति उपेक्षापूर्ण रवैया। अक्सर यह देखने को मिलता है कि पाठ्यक्रम में होने बावजूद न तो प्राध्यापक छात्रों में अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य के प्रति रुचि पैदा कर पाते हैं और न हि छात्र इसके लिए उत्सुक हैं। इस सोच में बदलाव जरूरी हैं। यही हाल शोध के क्षेत्र में भी हैं। अन्तरभाषीक साहित्य शोध अब अपवाद में ही देखने को मिलता हैं।

डॉ. रामविलास शर्मा ने ठीक ही लिखा है कि—"यदि राष्ट्रबहुजाति है, उनमें अनेक भाषाओं का व्यवहार होता है, तो अत्यंत स्वभाविक है कि भारतीय साहित्य के अंतर्गत अनेक भाषाओं में रचे हुए साहित्य का विवेचन किया जाय। किसी एक भाषा में रचे हुए साहित्य को ही भारतीय समझना अस्वाभाविक होगा।

Scanned with CamScanner

भारतीय साहित्य में संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश साहित्य की परम्परा और निरन्तरता हैं। वीरता के गीत हैं। चारण काव्य की परम्परा हैं। नाथों की शारीरिक मानसिक शुचिता हैं। भक्ति आंदोलन के मानुष सत्य की अभय वाणी हैं। संतकाव्य की गरू महिमा और सामाजिक सांस्कृतिक प्रतिरोध के अनेक स्तर हैं। लोक की अपूर्व महत्ता हैं। राम काव्य की मर्यादा और लोक मंगल के जयगान हैं। कृष्ण के लोकरंजन और स्त्री मुक्ति के विविध आयाम हैं। प्रेमाख्यानक परम्परा की सूफीधारा में स्नात मानुष प्रेम की दिव्यगाथा हैं। वैष्णव परम्परा की अहिंसा और सादगी हैं। भारतीय साहित्य का यह रूप संवादधर्मी हैं। सामयिक है। जीवन जीने की कला से युक्त हैं यह भव्य बोध धर्म को धारण करने की धैर्य और भारतीयता की समन्वय राग से युक्त हैं।

भारतीय साहित्य का विकास उपनिवेषवाद साम्राज्यवाद के विरोध में रूप धरता हैं। भारतीय साहित्य 1857 की मुक्ति संग्राम, सामाजिक धार्मिक, जागरण सुधार और मुक्त चेतना का प्रतीक हैं।

ये सभी बातें भारतीय साहित्य में भाषिक और क्षेत्रीय दैविध्य के बावजूद एक महाराग की भारतवाणी में सूनी जा सकती हैं।

भारतीय साहित्य हमें परम्परा का महत्व बताती है आधुनिकता का विवेकबोध जगाती है समकालीन समय में भाषायी संकीर्णता से ऊपर उठकर विशाल परिप्रेक्ष्य देती हैं। आंचलिकता के कूपमण्डूकता से ऊपर उठकार भारतीयता का आकाश दिखाती हैं। भारतीय किसान, मजदूर, स्त्री उपेक्षित, वंचित की चिन्ताओं से हमें सजग रूप में जोड़कर मनुष्य भाव की चेतना भरती हैं। भारतीय साहित्य के आयामों के विषय में 'संस्कृति के चार अध्याय' लिखने वाले राष्ट्र कवि रामधारी सिंह दिनकर की पंक्तियाँ याद आती है–

"कलमें लगाना जानते हो
तो जरूर लगाओ
मगर ऐसा हो कि
फलों में मिट्टी का स्वाद रहे
और एक बात याद रहे
संस्कृति चीनी नहीं मधु हैं।"

भारतीय साहित्य भारतीय संस्कृति का दर्पण है इस दर्पण में हम सब अपना आत्मावलोकन और जीवन विस्तार देख सकते हैं।

Scanned with CamScanner

सन्दर्भ

1. भारतीय साहित्य, : सं. डॉ. मूलचंद गौतम 2017, राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली
2. भारतीय साहित्य, : सं. डॉ.नगेन्द्र 1995, प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली
3. भारतीय चिन्तन परम्परा, : के. दामोदरन 2012, पीपुल्स पब्लिसिंग हाउस, नयी दिल्ली
4. हिन्दी साहित्य कोश, सं. धीरेन्द्र वर्मा 2005, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी
5. हिन्दी साहित्य उद्‌भव और विकास, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी 1952, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
6. भारतीय साहित्य की पहचान, सियाराम तिवारी 2015, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली
7. आधुनिक भारतीय चिन्तन, विश्वनाथ नरवणे 2014, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली

Scanned with CamScanner

MAH/MUL/ 03051/2012 ISSN :2319 9318

आंतरविद्याशाखीय बहुभाषिक शोध पत्रिका

विद्यावार्ता™

Special Issue, October 2019

स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाडा विश्वविद्यालय, नांदेड
तथा हिंदी विभाग और IQAC
बहिर्जी स्मारक महाविद्यालय
बसमतनगर, जि.हिंगोली
Accredited by NAAC B+Grade

के संयुक्त तत्वावधान
आयोजित एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्टी

समकालीन हिंदी साहित्य में स्त्री चेतना

संपादक
डॉ.सुभाष क्षीरसागर
डॉ.रेविता कावले
डॉ.शेख रजिया शहेनाज

Reg.No.U74120 MH2013 PTC 251205
Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.
At.Post.Limbaganesh,Tq.Dist.Beed
Pin-431126 (Maharashtra) Cell:07588057695,09850203295
harshwardhanpubli@gmail.com, vidyawarta@gmail.com
All Types Educational & Reference Book Publisher & Distributors / www.vidyawarta.com

Scanned with CamScanner

Index

१. समकालीन साहित्य

01) समकालीन हिंदी कथा साहित्य मे स्त्री चेतना
डॉ. रेणुका मोरे, नांदेड ||22

02) मृणाल पांडे के निबंध साहित्य में स्त्री-चेतना
डॉ. संतोष राजपाल नागुर, मैसूर ||25

03) समकालीन हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श
डॉ. ज़ियाउर रहमान जाफ़री, नालंदा ||28

04) स्त्री मन के गाँठ खोलती गद्यकार महादेवी वर्मा
डॉ. अभिषेक कुमार पटेल, गुण्डरदेही ||29

05) आधी आबादी की आजादी का सच
डॉ. पद्माकर पांडुरंग घोरपडे, सलोनी जवारलाल राठोड ||32

06) समकालीन हिंदी कथा साहित्य में स्त्रीचेतना
प्रा. डॉ. सचिन रमेश चोले, लातूर ||35

07) स्त्री जीवन की वेदना और भावनाओ का संघर्ष
प्रा. डॉ. धीरज जनार्धन कत्ते, चापोली ||38

08) समकालीन कथासहित्य में चित्रित नारी चेतना
प्रा. कोरेबोईनवाड साईनाथ डी., धर्माबाद ||40

09) समकालीन हिंदी कथा साहित्य में स्त्री चेतना
डॉ. बी. आर. नळे, माजलगाव ||42

10) समकालीन हिन्दी महिला उपन्यासो में स्त्री चित्रण
प्रा. कांबळे एस. एस., हिंगोली ||45

11) समकालीन महिला लेखिका गोरोपंत शिवानी एक अध्ययन
लामतुरे वसंत हिरामण, उदगीर ||48

Scanned with CamScanner

उस ग्रामीण स्त्रियों की दशा पर प्रकाश डाला है,जो कई अभिशाप को सहते हुए समाज का मुक़ाबला करती हैं। मृदुला गर्ग की कहानी तीन कीलों की टोकरी में नारी पशुवत बर्बरता को झेलती है।

असल में सबसे ज़रूरी है, समाज का प्रगतिशील होना जो हमें बचपन से सिखाता है कि स्त्री का चरत्रि पुरूष के चरित्र से ठीक विपरीत होना चाहिए। उर्मिला शिरीष का सवाल वाजिव है कि- एक ही मां-बाप की संतान में इतना अंतर वही नाम, कुल, गोत्र, पहचान,खून एक होता है, तो उसकी चीज़ क्यों अलग हो जाती है।[२] लेखिका तस्लीमा नसरीन साफ़ तोर पर कहती हैं कि उन सभी प्रथाओं, रीति-रिवाजों का खण्डन करना चाहिए, जिनके अस्तित्व का कोई तार्किक कारण नहीं होता।[३]

स्त्री विमर्श को बहाने स्त्री की हैसियत हिन्दी की कई, कहानियों, कविताओं, लेखों, नाटकों आदि में दिखाई देती है। स्त्री विमर्श और स्त्री के हालात को समझने के लिए कृष्णा सोबती का सूरजमुखी अंधेरे के, उषा प्रियंवदा कृत, रूकेगी नहीं राधिका, मन्नु भण्डारी का उपन्यास आपका, बंटी शिवानी की लिखी हुई कृष्णा कली, ममता कालिया का बेधर, और नासिरा, शर्मा कृत सात नदियां एक समुन्दर का अध्ययन बेहद ज़रूरी हैं। यह वे किताबें हैं, जिसने स्त्री विमर्श को हिन्दी कथा साहित्य में स्थान दिलाया है। इन उपन्यासों में स्त्री के अंदर की मुक्ति की छटपटाहट दिखती है। चित्रा मुद्गल के आवां की नीता कहती है- "में पत्नी नहीं सहचरी बनना चाहती हूं.....पत्नी शब्द में मुझें दासीत्व की बू आती है।[४] ममता कालिया का मानना है कि स्त्री के अपने देह पर अपना अख्तियार होना चाहिए। वह लिखती हैं- तुम्हारी देह तुम्हारी अपनी है। तुम उसका जो चाहो इस्तेमाल करो।[५]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि हिन्दी की महिला लेखिकाओं ने अपने दम पर अपनी अस्मिता का निर्माण किया है। स्त्री विमर्श सिर्फ अपना दुख बयान करने की रचना नहीं है। इन रचनाओं में नायिकाएं खुद अपने महत्व को रेखाकित करती हैं, परंपरा का विरोध करती हैं। किसी के हाथ का खिलोना नहीं बनतीं। दुनिया ने जिसे सिर्फ जिस्म समझा था, उसे पता चला कि उसकी और भी क़िस्म है।

संदर्भ :

१. स्त्री विमर्श - विविध पहलू -डॉ. कल्पना वर्मा पृष्ठ-१०
२. निर्वासन - उर्मिला शिरीष - पृष्ठ-९३
३. नष्ट लड़की नष्ट गद्य - तसलीमा नसरीन,पृष्ठ-४
४. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ-१६० -१६१
५. हिन्दी अनुशीलन, जुन-२००४, पृष्ठ-०७

❑❑❑

04

स्त्री मन के गाँठ खोलती गद्यकार महादेवी वर्मा

डॉ. अभिषेक कुमार पटेल
सहा.प्राध्यापक, शासकिय महा.विद्या.गुण्डरदेही (छ.ग)

फ्रांसीसी विद्वान चार्ल्स फूरिए ने कहा था कि किसी समाज की प्रगति का सबसे बड़ा पैमाना यह है कि उस समाज में औरतें कितनी स्वतंत्र हैं और हन्हें कितनी समानता हासिल है।' इस नजरिये से अगर अपने समाज पर नजर डाले तो स्थिति भयावह दिखाई पड़ती है। नारी की इसी स्थिति का सच्चा एवं मार्मिक चित्रण महादेवी वर्मा ने अपने रेखाचित्रों एवं संस्मरणों में किया है। इनके नारी चरित्र न केवल अपनी करूणा एवं त्याग से हमें आप्लावित करते है बल्कि इस दुर्दशा के लिये जिम्मेदार व्यवस्था के प्रति उद्वेलित भी करते हैं।

पुरूष वादी बाजार व्यवस्था आज स्त्री को बाजार की चमकती चौंधियाती एवं आकर्षित करती वस्तु में बदल कर उसका शोषण कर रहा है। बाजार की चमक दमक से चौंधियाई स्त्री उसी को अपनी मुक्ति की राह मान बैठी है, जो छलावा मात्र है। महादेवी वर्मा ने नारी और नारी मुक्ति के प्रश्न को व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखा। उनकी दृष्टि में " नारी केवल मांस पिडं की संज्ञा नहीं है। आदिम काल से आज तक विकास पथ पर पुरूष का साथ देकर उसकी यात्रा को सरल बनाकर उसके अभिशापों को स्वयं झेलकर और अपने वरदानो से जीवन में अक्षय शक्ति भरकर मानवी ने जिस व्यक्तित्व चेतना और ह्रदय का विकास किया है उसी का पर्याय नारी है।"[१] महादेवी वर्मा की नारी पात्र इनको चरितार्थ भी करती हैं। 'सबिया' का जीवन मूल्याधारित है। 'सबिया' नाम पौराणिक सावित्री का अपभ्रंश है लेकिन उसके पति का नाम 'मेकू' सत्यवान का अपभ्रंश नहीं है। जब सबिया अपने तीन दिन के शिशु को लेकर सोरी में थी तब उसका पति अपने जाति भाई की नयी वधू को लेकर कहीं भाग गया। उसके आचरण को जानते हुए भी सबिया पौराणिक सावित्री की तरह उसकी प्रतीक्षा करती रही। लम्बी प्रतिक्षा के बाद उसका पति आता भी है तो नई औरत के साथ। अपनी नई पत्नी के लिए मेकू के माँगे जाने पर वह अपनी नई साडी मेकू के हाथ में थमा देती है और स्वयं पुरानी पहन कर उस नई पत्नी गोंदा को लिवा लाने चली जाती है। वह अपने पति की ह्रदयहीन कृतघ्नता, सौत के अनुचित व्यंग्य और सास की अकारण

Scanned with CamScanner

निंदा पर भी ध्यान नहीं देती। उसे लगता है कि सब मानो बच्चे हैं और उनका खयाल रखना उसका कर्तव्य है। लेखिका कहती है कि "मै सबिया को उस पौराणिक नारीत्व के निकट पाती हूँ जिसन जीवन की सीमारेखा किसी अज्ञात लोक तक फैला दी थी।"[२] सबिया स्वयं प्रमाणित करती है कि पतिव्रत्य सिर्फ बड़े घर की स्त्रियों के चरित्रों के चरित्र का आभूषण नहीं है, वह सबिया जैसी असहाय नारी के चरित्र की भी चमक है। साथ ही महादेवी वर्मा की अन्तर्दृष्टि पुरूष के असली चरित्र को भी पहचान लेती हे कि "वह अपने छोटे से छोटे सुख के लिए स्त्री को बड़ा से बड़ा दुख दे डालता है।"[३]

महादेवी जी शृंखला की कड़ियाँ 'में एक चिंतक की तरह नारी संबंधी विचार रखती हैं। अपने उन विचारों को उन्होंने स्मृति की रेखाएँ एवं अतीत के चलचित्र में नारी चरित्रो के रूप मे मूर्त किया है। महादेवी जी मानती है कि नारी का मानसिक विकास पुरूषों के मानसिक विकास से भिन्न परन्तु अधिक तेज गति से होता है। उसके प्रेम, घृणा, आदि का भाव अधिक तीव्र होता है। इन्हीं विशेषताओं के कारण नारी समाज के उन अभावों की पूर्ति करती है जिनकी पूर्ति पुरूष स्वभाव द्वारा सम्भव नहीं। पुरूष और स्त्री मे उतना ही अंतर है जितना बिजली ओर वर्षा में। उनके अनुसार समाज में दो प्रकार की स्त्रियाँ है एक वे जिन्हे यह ज्ञान ही नही है कि उनका भी अपना एक स्वतंत्र व्यक्तित्व है, दूसरी वे जो पुरूषों की समता करने के लिए उन्हीं के दृष्टि कोण से संसार को देखती हैं ओर गौरव का अनुभव करती हैं। आखिर एक ओर अर्थहीन अनुसरण है तो दूसरी ओर अनर्थमय अनुकरण। आज की नारीवादी पुरूषों की दृष्टि कोण से ही संसार को देख रही है। ये मानती हैं कि "योन मुक्ति में ही स्त्री मुक्ति का मंत्र छिपा हुआ है।"[४] यानी पुरूषों को भोग के लिए स्त्री स्वेच्छा से उपलब्ध हो। यह केसी स्त्री स्वतंत्रता है ? देह से मुक्त होने की बजाय देह पर वापसी। पुरूष के इस छलावा को महादेवी जी ने ७० वर्ष पूर्व ही पहचान लिया था, जिसे आज की आधुनिक स्त्रियाँ नही पहचान पा रही हैं। महादेवी जी योन मुक्ति को ही स्त्री मुक्ति नहीं मानती बल्कि स्त्री की आर्थिक, सामाजिक ओर सांस्कृतिक पराधीनता से मुक्ति को स्त्री मुक्ति मानती हे। बिबिया, भाभी, बिट्टो , बालिका माँ आदि का जीवन नारकीय इस लिए हो जाता है कि वे आर्थिक सामाजिक ओर सांस्कृतिक पराधीनता से मुक्त नहीं है। पुरूषों द्वारा पुरूषो के प्रभुत्व के लिए बनाए गए ढाँचे में बेकसूर बिबिया को नरकीय जीवन जीने के अधिकार से भी वंचित कर उसे आत्महत्या करने पर मजबूर किया गया। जन्म से पहले ही विवाह तय कर देना, पांच वर्ष की उम्र में विवाह ओर बिना उसके इच्छा को जाने पुनर्विवाह कर देना स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व को नकारना है। पुरूष के लिए स्त्री महज एक वस्तु हे, तभी तो बिबिया का जुआरी पति रमई जुआ खेलते समय कहता हे।"आज तो रूपया गाँठ में हे न होगा तो मेहरारू ओर किस दिन के लिए होती है।"[५] भारतीय समाज मे स्त्रीयों के शोषण को बंधनों को कठोर और अकाटय बनाने में बहुत बड़ी भूमिका धर्म और उसके शास्त्रो की है। पुरूष स्वयं चाहे कितना ही पतित क्यों न हो परंतु स्त्रियों की तुलना वह गढ़े गये उच्च नैतिक मिथकीय चरित्रों से ही करता हे। महादेवी जी ने पुरूषों के इस दोहरे मापदंड को बखूबी पहचाना हे। बिबिया द्वारा स्वयं को बेचे जाने का विरोध करने पर लखना अहीर बोला' "मेहररूअन अब मन से धुअन का मारे बरे घूमती हे, राम राम। अबं जानो कलयुग परगट दिखाय लागा।' तो महँगू काछी शास्त्र ज्ञान का परिचय देने लगा "ऊ देखो छीता रानी कस रही, उदू निकार दिहिन तऊ न बोलीं विचारिउ बेटवन का ले के झारखण्ड मा परी रहीं। " इससे स्पष्ट है कि पुरूषों ने धर्म की आवरण में स्त्री को मानवी न बना कर उसे निर्जीव देवी बना दिया ताकि वह अपने जीवन की पराधीनता को भूल कर पुरूषों के सुख दुख की चिन्ता करे। महादेवी वर्मा अपने को रोक नही पाती ओर स्पष्ट कहती हैं कि अब भारतीय स्त्री को अपनी ऐसी स्थिति स्वीकार नही है" आज वह न घर का अलंकार मात्र बनकर जीवित रहना चाहती हे न देवता की मूर्ति बनकर प्राण-प्रतिष्ठा चाहती है।"[६] इस पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था में अगर स्त्री को न्याय न मिल पाए तो आश्चर्य क्या ? पंचो ने उल्टे बिबिया को कर्तव्यच्युत होने के लिए दंड का प्रावधान किया।

पुरूष की स्थिति अजीबोगरिब हे वह स्त्री के साथ व्यभिचार भी करता है और उसका बहिष्कार भी। इसी दोहरी नीति का खुलासा बलिका माँ मे महादेवी जी ने किया है। इसमें उस माँ की गाथा है जिसकी संतान उसके साथ किए गए व्यभिचार से उत्पन्न हुई है। यह बालिका माँ धोखा खाई हुई है पर समाज न उसे समझने को तैयार है न सहने को। लेखिका कहती हैं " यदि ये स्त्रियाँ अपने शिशु को गोद में लेकर साहस से कह सकें कि बर्बरों तुमने हमारा नारीत्व, पत्नीत्व सब ले लिया पर हम अपना मातृत्व किसी प्रकार न देंगी तो इनकी समस्याएँ तुरंत सुलझ जाए।"[७] महादेवी जी के इस सुझाव पर अगर स्त्री विचार करे तो निश्चय ही पुरूषों को मुँह की खानी पड़ेगी।

बाल विधवा की असहनीय पीड़ा को महादेवी वर्मा बार बार चित्रित करती हैं। 'भाभी' जो एक बाल विधवा है परिवार के अत्याचारों को सहती दम साध जी रही है। उसके बिना बोले ही उसकी ऑखे उसकी व्यथा व्यक्त कर देती हैं। "उस समाधि जेसे घर में लोहे के प्राचीर से घिरे फूल के समान वह किशोरी बालिका बिना किसी संगी साथी बिना किसी प्रकार के आमोद - प्रमोद के मानो निरंतर वृध्दा होने की साधना में लीन थी।"[८] इस समाज में जीने का हक खो चुकी विधवा स्त्रियों की जानवर से बदतर जीवन का मार्मिक

Scanned with CamScanner

एवं यथार्थ चित्रण जो महादेवी ने किया है वह पूरे भारत की विधवा स्त्रियों को दशा को दर्शाता है। महादेवी वर्मा बार बार इनके जीवन के सम्पूर्ण अधिकारों की माँग करती हैं।

इस पुरूष वादी समाज के थोपे गए प्रतिमान स्त्रियों में भी इस कदर पैठ बना चुका है कि वे स्वयं दूसरी स्त्री के शोषण में पुरूष से कंधा से कंधा मिला कर ही नहीं चलती बल्कि उससे आगे भी निकल जाती हैं। भाभी को जहाँ उसकी ननद प्रताडित करती है वही बिन्दा का शोषण उसकी सौतेली माँ ने इतना किया की उसे जीवन से ही मुक्ति मिल गई। अत: महादेवी वर्मा स्त्रियों के औंखो पर पडें पर्दे को हटाने की कोशिश की है।

महादेवी वर्मा की स्त्री पोत्र सिर्फ अपने करूण दशा की ही रोना नही रोतीं बल्कि अपने करूणा त्याग एवं बलिदान से स्त्री धर्म की महानता को प्रतिष्ठित भी करती हैं। देहाती महिला भक्तिन स्वामी भक्ति में हनुमान से ही लोहा लेने लगती है। वह अशिक्षा एवं अज्ञान से ग्रस्त है लेकिन उसके कुछ गुण उसके व्यक्तित्व को आकर्षक बनाते हैं। वात्सल्य भाव से लबालब भरी गुंगिया का जीवन भी हमें कम प्रभावित नहीं करता। "भारतीय स्त्री की स्वाधीनता के बारे में महादेवी वर्मा का दृष्टि कोण व्यापक है। वे केवल सम्पन्न और शहरी मध्यवर्ग की स्त्रियों की स्वाधीनता बडी चिन्ता नही करती। वे श्रमजीवी समुदाय की स्त्रियों की जागृति और स्वतंत्रता के बारे में भी सोचती है।"[९] महादेवी वर्मा की अधिकांश नारी पात्र दलित ही हैं। इन्होंने सहानुभूति के साथ उनके दुर्दशा के मूल कारणों को जानने की कोशिश की हैं। परन्तु आज जब कि डा. धर्मवीर जैसे दलित आलोचक" दलित स्त्रियों (बुधिया और उसकी जैसी अन्य स्त्री) की डी.एन. टेस्ट कराने की माँग कर रहे है।"[१०] (जनसत्ता ,१६ अक्टूबर २००५ पृष्ट ७ गोरे नंद जसोदा गोरी) तो निश्चय ही समझा जा सकता है कि दलित विमर्श में दलित स्त्री की क्या दशा है ? वहाँ भी घुमा फिरा कर बात बात पुन: स्त्री देह पर ही टिक जाती है। क्या इससे उनकी मुक्ति संभव है ? निश्चय ही यह पुरूषों का स्त्रियों को अपने नियंत्रण मे रखने एवं स्त्री धर्म को शर्मसार करने के चोंचले हैं।

महादेवी जी ने लछमा, बिबिया ,गुंगिया,आदि की दारूण दशा का चित्रण कर उनके जागृति एवं आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक समानता एवं स्वाधीनता की माँग की हैं। साथ ही कृषक एवं अन्य श्रमजीवी स्त्रियों द्वारा श्रम से अर्जित स्वावलम्बन की भावना से प्रेरणा लेकर सम्पन्न और मध्यवर्ग की स्त्रियाँ भी अपनी मुक्ति की राह पर अधिक सहजता से आगे बढ सकती हैं। महादेवी वर्मा की स्त्री संबंधी से विचार २०वी शताब्दी के तीसरे और चोथे दशक के उस नारी आंदोलन की देन है जिसमें वे सक्रिय रूप से सम्मिलित थीं , इस लिए उसमें उस समय की नारी चेतना के जागरण की अनुगूंज हैं। 'बालिका माँ' के साथ हुए अत्याचार के सबंध महादेवी जी अपना दो टूक राय व्यक्त करती हैं कि "युगो से पुरू स्त्री को उसकी शक्ति के लिए नही,सहन शक्ति के लिए ही दण्ड दे आ रहा है।"[११] वे बिना लाग लपेट के कहती है इस स्थिति मे परिवर्त याचना से नहीं स्वाधीनता के लिए संघर्ष से ही संभव है। उन्हें भारती नारी की जीवटता में पूर्ण विश्वास है। वे कहती हैं "भारतीय नार जिस दिन अपने सम्पूर्ण प्राण वेग से जग सके उस दिन उसकी गति रोकना किसी के लिए संभव नहीं। उसके अधिकारों के सम्बन्ध मे यह सत्य हे कि वे भिक्षावृत्ति से न मिले हें ओर न मिलगें , क्योंकि उनकी स्थिति आदान प्रदान योग्य वस्तुओं से भिन्न है।"[१२] महादेवी वर्मा के ये विचार इसलिए भी महत्वपूर्ण हो जाते हैं कि उनके ये विचार सीमोन द बोउवार द्वारा रचित 'द सेकेण्ड सेक्स' (१९४७) से पहले के है। इसलिए ऐसा भी नहीं कहा जा सकता कि पश्चिम में नारी वादी चेतना की जो लहर उठी उसी की देन हैं।

महादेवी जी का सम्पूर्ण साहित्य चाहे वह कविता हो चाहे रेखाचित्र , चाहे निबंध समाज के सामने नारी का पक्ष रखने की कोशिश है। 'अतीत के चलचित्र' एवं 'स्मृति की रेखाएँ' के रेखाचित्रो में विभिन्न पेशावर्गो की नामधारी स्त्रियाँ अपनी दारूण दशा से हमें समाज में अपनी दु:स्थिति का बोध भर नही कराती बल्कि समाज से उचित स्थान की माँग भी करती हैं। महादेवी जी के रेखा चित्र उनके नारी सम्बंधी दृष्टि कोण के छाया चित्र हे।

सन्दर्भ सूची :

१. श्रृंखला की कडियाँ - महादेवी वर्मा , लोक भारती प्रकाशन, संस्करण - २००२, पृष्ठ - ७
२. अतीत के चल चित्र - महादेवी वर्मा , लोक भारती प्रकाशन संस्करण - २००२ , पृष्ठ - ४५
३. वही, पृष्ठ - ४१
४. नया ज्ञानोदय जुलाई २००५ पृष्ठ - ५०
५. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा , लोक भारती प्रकाशन संस्करण - २००३, पृष्ठ - ८९
६. श्रृंखला की कडियाँ - पृष्ठ - १०६
७. अतीत के चल चित्र - पृष्ठ - ५६
८. वही, पृष्ठ - २७
९. अनमे, सॉचा - डॉ. मैनेजर पाण्डेय, पूर्वोदय प्रकाशन संस्करण - २००२, पृष्ठ - १८६
१०. गोरे नंद, जसोदा गोरी डॉ धर्मवीर जनसत्ता, दिल्ली १६ अक्टूबर २००५, पृष्ठ - ७
११. अतीत के चल चित्र, पृष्ठ - ५६
१२. शृंखला की कडियाँ, पृष्ठ - ९

❑❑❑

Scanned with CamScanner